SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की व्याख्या में के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि का विश्लेषण

मीरा केवट [1], प्रो. (डॉ.) गिरीश चन्द्र पाण्डेय [2]

[1] शोधार्थी, इतिहास विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर (बिहार)
[2] प्रोफेसर, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, मुंगेर विश्वविद्यालय, मुंगेर (बिहार)

सारांश

प्राचीन भारतीय राजनीतिक इतिहास के अध्ययन में काशी प्रसाद (के.पी.) जायसवाल का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। उन्होंने औपनिवेशिक इतिहासकारों की उस धारणा का खंडन किया कि प्राचीन भारत में लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक संस्थाओं का अभाव था। अपनी प्रसिद्ध कृति 'हिन्दू पॉलिटी' के माध्यम से उन्होंने वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, अभिलेखों तथा अन्य ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में सभा, समिति, गण, संघ एवं मंत्रिपरिषद जैसी विकसित राजनीतिक संस्थाएँ विद्यमान थीं। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि तथा प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं संबंधी उनकी व्याख्याओं का विश्लेषण एवं आलोचनात्मक मूल्यांकन करना है। अध्ययन गुणात्मक एवं वर्णनात्मक अनुसंधान पद्धति पर आधारित है तथा द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। शोध से स्पष्ट होता है कि जायसवाल ने भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को नई दिशा प्रदान करते हुए भारतीय लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक परंपराओं के ऐतिहासिक आधार को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। यद्यपि उनकी कुछ व्याख्याओं की आधुनिक इतिहासकारों द्वारा आलोचना की गई है, फिर भी भारतीय राजनीतिक इतिहास के अध्ययन में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और स्थायी है।

मुख्य शब्द: के.पी. जायसवाल, इतिहास-दृष्टि, प्राचीन भारत, गणराज्य, राजनीतिक संस्थाएँ, हिन्दू पॉलिटी।

1. प्रस्तावना

भारतीय इतिहासलेखन के विकास में बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। इस समय भारत ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अधीन था और इतिहास लेखन पर औपनिवेशिक इतिहासकारों का गहरा प्रभाव था। अनेक यूरोपीय विद्वानों ने यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में लोकतांत्रिक संस्थाओं, संवैधानिक शासन तथा जनप्रतिनिधित्व की परंपरा विकसित नहीं थी तथा यहाँ की राजनीतिक व्यवस्था मुख्यतः निरंकुश राजतंत्र पर आधारित थी। इसके विपरीत भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, अभिलेखों, सिक्कों तथा पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि प्राचीन भारत की राजनीतिक व्यवस्था विकसित एवं संस्थागत स्वरूप की थी।[1]

इसी राष्ट्रवादी इतिहासलेखन के प्रमुख विद्वानों में काशी प्रसाद जायसवाल (के.पी. जायसवाल) का विशेष स्थान है। अपनी प्रसिद्ध कृति हिन्दू पॉलिटी के माध्यम से उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में सभा, समिति, गण, संघ तथा मंत्रिपरिषद जैसी राजनीतिक संस्थाएँ सक्रिय थीं और भारतीय शासन व्यवस्था केवल निरंकुश राजशाही तक सीमित नहीं थी। उनके अनुसार लिच्छवि, शाक्य, मल्ल तथा यौधेय जैसे अनेक राज्य गणतांत्रिक स्वरूप के थे, जहाँ सत्ता का संचालन सामूहिक संस्थाओं एवं परिषदों के माध्यम से किया जाता था।

[1] शर्मा, रामशरण। (1991). प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ (अंग्रेज़ी मूल: Aspects of Political Ideas and Institutions in Ancient India). नई दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

जायसवाल का यह भी मत था कि प्राचीन भारतीय राजा पूर्णतः निरंकुश नहीं था, बल्कि उसकी शक्तियाँ धर्म, सामाजिक मर्यादाओं तथा मंत्रिपरिषद द्वारा नियंत्रित होती थीं। उन्होंने 'धर्म' को शासन की संवैधानिक एवं नैतिक मर्यादा के रूप में व्याख्यायित करते हुए यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत में विधि के शासन तथा संवैधानिक व्यवस्था की परंपरा अत्यंत प्राचीन रही है। यद्यपि आधुनिक इतिहासकारों, विशेषकर रामशरण शर्मा एवं रोमिला थापर, ने उनकी कुछ व्याख्याओं की आलोचना करते हुए गणराज्यों को कुलीनतंत्रीय स्वरूप का माना है, फिर भी यह निर्विवाद है कि के.पी. जायसवाल ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की। उनके शोधों ने भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को सुदृढ़ आधार दिया तथा भारतीय राजनीतिक चिंतन में गणतंत्र, प्रतिनिधित्व और संवैधानिक परंपराओं के ऐतिहासिक महत्व को स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। [2]

2. साहित्य की समीक्षा

प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं तथा के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि पर अनेक इतिहासकारों एवं विद्वानों ने समय-समय पर अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत की राजनीतिक व्यवस्था, गणराज्यों की प्रकृति तथा शासन-संरचना को लेकर विभिन्न इतिहासकारों के बीच मतभेद विद्यमान रहे हैं। प्रस्तुत अध्ययन के संदर्भ में उपलब्ध साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन निम्न प्रकार से किया गया है।

के.पी. जायसवाल ने अपनी प्रसिद्ध कृति "Hindu Polity" (1924) में औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा प्रतिपादित उस धारणा का खंडन किया, जिसके अनुसार प्राचीन भारत केवल निरंकुश राजतंत्र पर आधारित था। उन्होंने वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, अभिलेखों, मुद्राओं तथा अन्य ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में सभा, समिति, गण, संघ एवं मंत्रिपरिषद जैसी विकसित राजनीतिक संस्थाएँ विद्यमान थीं। उनके अनुसार लिच्छवि, शाक्य, मल्ल तथा यौधेय जैसे गणराज्य भारतीय लोकतांत्रिक परंपरा के महत्वपूर्ण उदाहरण थे तथा राजा धर्म एवं सामाजिक मर्यादाओं द्वारा नियंत्रित रहता था। ए.एस. अल्तेकर ने अपनी कृति "State and Government in Ancient India" में प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था, प्रशासनिक संरचना एवं शासन प्रणाली का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। उन्होंने यह स्वीकार किया कि प्राचीन भारत में राजनीतिक संस्थाओं का सुविकसित स्वरूप विद्यमान था, किन्तु उन्होंने इन संस्थाओं की कार्यप्रणाली का विश्लेषण अधिक ऐतिहासिक एवं प्रशासनिक दृष्टिकोण से किया।

एच.सी. रायचौधुरी ने "Political History of Ancient India" में प्राचीन भारतीय राजनीतिक विकास का क्रमबद्ध ऐतिहासिक अध्ययन प्रस्तुत किया। उन्होंने विभिन्न राजवंशों, गणराज्यों तथा प्रशासनिक संस्थाओं के विकास का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करते हुए ऐतिहासिक स्रोतों की प्रमाणिकता पर विशेष बल दिया।

रामशरण शर्मा ने "Aspects of Political Ideas and Institutions in Ancient India" में के.पी. जायसवाल की अनेक मान्यताओं का आलोचनात्मक परीक्षण किया। उनके अनुसार प्राचीन भारतीय गणराज्यों को आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था के समकक्ष नहीं माना जा सकता, क्योंकि अधिकांश गणराज्यों में राजनीतिक अधिकार केवल अभिजात वर्ग तक सीमित थे। उन्होंने इन राज्यों को कुलीनतंत्रीय (Oligarchic) स्वरूप का माना तथा सामाजिक एवं आर्थिक संरचना के संदर्भ में उनका विश्लेषण किया।

रोमिला थापर ने "Early India: From the Origins to AD 1300" में प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के विकास को सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों के संदर्भ में समझने का प्रयास किया। उनके अनुसार प्राचीन भारतीय गणराज्यों में सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया अवश्य थी, किन्तु उन्हें आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाओं के रूप में स्वीकार करना ऐतिहासिक दृष्टि से उचित नहीं है।

[2] कौटिल्य। (2011). अर्थशास्त्र (हिन्दी अनुवाद). नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

इनके अतिरिक्त कौटिल्य के अर्थशास्त्र, पाणिनि की अष्टाध्यायी, वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों पर आधारित अनेक शोधों में भी प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था एवं प्रशासनिक संस्थाओं की संरचना का विश्लेषण किया गया है। इन अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय राजनीतिक चिंतन अत्यंत समृद्ध था तथा शासन प्रणाली अनेक संस्थागत व्यवस्थाओं पर आधारित थी।

3. अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की व्याख्या के संदर्भ में के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि का विश्लेषण एवं मूल्यांकन करना है। इसके अंतर्गत उनकी वैचारिक पृष्ठभूमि, इतिहासलेखन पद्धति तथा सभा, समिति, गण, संघ और मंत्रिपरिषद जैसी संस्थाओं के संबंध में उनके विचारों का अध्ययन किया जाएगा। साथ ही राष्ट्रवादी इतिहासलेखन में उनके योगदान तथा रामशरण शर्मा, रोमिला थापर और अन्य आधुनिक इतिहासकारों द्वारा प्रस्तुत आलोचनाओं के आधार पर उनके निष्कर्षों की प्रासंगिकता एवं सीमाओं का परीक्षण किया जाएगा।

4. अनुसंधान पद्धति

प्रस्तुत शोध गुणात्मक एवं वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक अनुसंधान पद्धति पर आधारित है। इसका उद्देश्य के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि तथा प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं संबंधी उनके विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन करना है। अध्ययन में मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों, जैसे उनकी प्रमुख कृति हिन्दू पॉलिटी, शोध-पत्रों, मानक पुस्तकों, समीक्षित पत्रिकाओं, शोध-प्रबंधों तथा वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, अर्थशास्त्र, अष्टाध्यायी, अभिलेखों एवं मुद्राओं से संबंधित प्रकाशित अध्ययनों का उपयोग किया गया है।[3]

अध्ययन में ऐतिहासिक, तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए के.पी. जायसवाल के विचारों की तुलना रामशरण शर्मा, रोमिला थापर तथा अन्य आधुनिक इतिहासकारों के मतों से की गई है। साथ ही विषयवस्तु विश्लेषण के माध्यम से उनकी अवधारणाओं एवं ऐतिहासिक व्याख्याओं का मूल्यांकन कर भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन तथा प्राचीन भारतीय राजनीतिक परंपराओं के अध्ययन में उनके योगदान और सीमाओं का समालोचनात्मक परीक्षण किया गया है।

5. प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों (डेटा) का विश्लेषण

प्रस्तुत शोध ऐतिहासिक अनुसंधान की प्रकृति का है, जिसमें उपलब्ध प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य के.पी. जायसवाल द्वारा प्रस्तुत प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की अवधारणा का ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर परीक्षण करना तथा आधुनिक इतिहासकारों के मतों के साथ उसका तुलनात्मक विश्लेषण करना है।

इस अध्ययन में प्राथमिक स्रोतों के अंतर्गत ऋग्वेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण एवं उपनिषद साहित्य, बौद्ध त्रिपिटक, जैन आगम, कौटिल्य का अर्थशास्त्र, पाणिनि की अष्टाध्यायी, अभिलेख, शिलालेख, मुद्राएँ तथा यूनानी यात्रियों के विवरणों का अध्ययन किया गया है। इन स्रोतों से सभा, समिति, गण, संघ, मंत्रिपरिषद, राजसत्ता, प्रशासनिक व्यवस्था तथा धर्म के राजनीतिक स्वरूप से संबंधित ऐतिहासिक साक्ष्यों का विश्लेषण किया गया। इन स्रोतों ने यह समझने में सहायता प्रदान की कि प्राचीन भारत की राजनीतिक व्यवस्था केवल राजतंत्र तक सीमित नहीं थी, बल्कि विभिन्न प्रकार की संस्थागत व्यवस्थाएँ भी शासन का अभिन्न अंग थीं।

अध्ययन में द्वितीयक स्रोतों के रूप में के.पी. जायसवाल की Hindu Polity, ए.एस. अल्तेकर, एच.सी. रायचौधुरी, रामशरण शर्मा, रोमिला थापर तथा अन्य प्रतिष्ठित इतिहासकारों की पुस्तकें, शोध-पत्र, शोध-प्रबंध, समीक्षित पत्रिकाएँ एवं प्रकाशित अनुसंधानों का उपयोग किया गया है। इन स्रोतों के माध्यम से प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की विभिन्न व्याख्याओं, राष्ट्रवादी एवं आधुनिक इतिहासलेखन के दृष्टिकोण तथा ऐतिहासिक निष्कर्षों की तुलनात्मक समीक्षा की गई। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों के तुलनात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि के.पी.

[3] जायसवाल, काशी प्रसाद। (1933). हिस्ट्री ऑफ इंडिया (150–350 ए.डी.). कलकत्ता: बटरवर्थ एंड कम्पनी।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

जायसवाल ने उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों की राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से व्याख्या करते हुए भारतीय लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक परंपराओं की प्राचीनता पर विशेष बल दिया। दूसरी ओर आधुनिक इतिहासकारों ने उन्हीं स्रोतों का पुनर्मूल्यांकन करते हुए यह प्रतिपादित किया कि अधिकांश गणराज्य पूर्ण लोकतांत्रिक न होकर कुलीनतंत्रीय स्वरूप के थे। इस प्रकार दोनों प्रकार के स्रोतों के समन्वित अध्ययन से न केवल के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि की विशेषताओं एवं सीमाओं का समुचित मूल्यांकन संभव हुआ, बल्कि प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के ऐतिहासिक स्वरूप को भी अधिक संतुलित एवं वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण से समझा जा सका।

अंततः प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों के समेकित विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि के.पी. जायसवाल का योगदान भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यद्यपि उनकी कुछ व्याख्याओं पर आधुनिक इतिहासकारों ने प्रश्न उठाए हैं, फिर भी उन्होंने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की तथा भारतीय राजनीतिक परंपराओं के पुनर्मूल्यांकन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

6. के.पी. जायसवाल : जीवन एवं बौद्धिक पृष्ठभूमि

काशी प्रसाद जायसवाल (27 नवम्बर 1881 – 4 नवम्बर 1937) आधुनिक भारत के प्रमुख इतिहासकारों, विधिवेत्ताओं तथा प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन के प्रतिष्ठित विद्वानों में गिने जाते हैं। उन्होंने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं, गणराज्यों एवं संवैधानिक परंपराओं के अध्ययन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। राष्ट्रवादी इतिहासलेखन के प्रमुख प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने औपनिवेशिक इतिहासकारों की उस धारणा को चुनौती दी, जिसमें भारत को केवल निरंकुश राजतंत्र वाला देश बताया गया था।[4]

के.पी. जायसवाल का जन्म उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर में हुआ तथा उन्होंने उच्च शिक्षा ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से प्राप्त की। भारत लौटने के बाद उन्होंने इतिहास, अभिलेखविज्ञान और मुद्राशास्त्र के क्षेत्र में व्यापक शोध कार्य किया। उनकी अनुसंधान पद्धति का आधार अभिलेखों, प्राचीन सिक्कों तथा संस्कृत साहित्य का तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन था, जिसके माध्यम से उन्होंने भारतीय राजनीतिक परंपराओं की नवीन व्याख्या प्रस्तुत की।[5] उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति 'हिन्दू पॉलिटी' है, जिसमें उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में सभा, समिति, गण, संघ तथा मंत्रिपरिषद जैसी संस्थाएँ शासन व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग थीं और राजसत्ता धर्म एवं संवैधानिक मर्यादाओं से नियंत्रित थी। यद्यपि आधुनिक इतिहासकारों, विशेषकर रामशरण शर्मा एवं रोमिला थापर, ने उनके कुछ निष्कर्षों की आलोचना की है, फिर भी भारतीय राजनीतिक इतिहास के पुनर्मूल्यांकन तथा राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को नई दिशा देने में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है।

7. के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि

के.पी. जायसवाल की इतिहास-दृष्टि राष्ट्रवादी होने के साथ-साथ स्रोत-आधारित भी थी। उनका मानना था कि प्राचीन भारत में राजनीतिक संस्थाएँ विकसित थीं और औपनिवेशिक इतिहासकारों ने भारतीय अतीत की एकपक्षीय व्याख्या प्रस्तुत की। उन्होंने अभिलेखों, शिलालेखों, सिक्कों तथा वैदिक एवं बौद्ध साहित्य के आधार पर भारतीय राजनीतिक परंपराओं का पुनर्मूल्यांकन किया । उनके अनुसार भारत में प्राचीन काल से ही सभा, समिति, गण और संघ जैसी संस्थाएँ शासन संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं तथा राजा पूर्णतः निरंकुश नहीं था। अपने विचारों के समर्थन में उन्होंने ऋग्वेद, अथर्ववेद, अष्टाध्यायी, अर्थशास्त्र और अन्य ऐतिहासिक स्रोतों का उपयोग किया तथा भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को संवैधानिक एवं प्रतिनिधिक परंपराओं से युक्त बताया ।

के.पी. जायसवाल के अनुसार वैदिक काल की सभा और समिति केवल सामाजिक या धार्मिक संस्थाएँ नहीं थीं, बल्कि शासन व्यवस्था की महत्वपूर्ण राजनीतिक इकाइयाँ थीं। उनके मत में समिति व्यापक जनसमूह का प्रतिनिधित्व करती थी तथा राज्य के महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श करती थी, जबकि सभा विशिष्ट एवं अनुभवी

[4] जायसवाल, काशी प्रसाद। (2005). हिन्दू पॉलिटी : हिन्दू काल में भारत का संवैधानिक इतिहास (पुनर्मुद्रित संस्करण). वाराणसी: चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान।
[5] अल्तेकर, अनन्त सदाशिव। (1958). प्राचीन भारत में राज्य और शासन व्यवस्था (अंग्रेज़ी मूल: State and Government in Ancient India). वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

व्यक्तियों की परिषद के रूप में राजा को परामर्श देने और प्रशासनिक कार्यों में सहयोग प्रदान करती थी। उन्होंने इन संस्थाओं को वैदिक समाज में राजनीतिक सहभागिता, सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया तथा संस्थागत शासन के विकास का प्रमाण माना।

जायसवाल ने लिच्छवि, मल्ल, शाक्य और यौधेय जैसे राज्यों को विकसित गणराज्य माना। उनके अनुसार इन राज्यों में शासन किसी एक शासक के बजाय परिषदों और प्रतिनिधियों के माध्यम से संचालित होता था तथा महत्वपूर्ण निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाते थे। उन्होंने इसे प्राचीन भारत में गणतांत्रिक परंपरा, जनसहभागिता और प्रतिनिधिक शासन के विकास का प्रमाण बताया। हालांकि आधुनिक इतिहासकार इन गणराज्यों को पूर्ण लोकतांत्रिक न मानकर कुलीनतंत्रीय व्यवस्था के रूप में देखते हैं।

जायसवाल का मत था कि प्राचीन भारतीय राजा की शक्तियाँ असीमित नहीं थीं। वह धर्म, शास्त्र, मंत्रिपरिषद तथा सामाजिक परंपराओं से नियंत्रित होता था और उसका प्रमुख दायित्व प्रजा की सुरक्षा, न्याय की स्थापना तथा राज्य का सुचारु संचालन था। इस आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि भारतीय राजतंत्र पूर्णतः निरंकुश न होकर उत्तरदायी एवं मर्यादित शासन व्यवस्था पर आधारित था। अपनी प्रसिद्ध कृति हिन्दू पॉलिटी में जायसवाल ने धर्म को शासन का सर्वोच्च नैतिक एवं विधिक आधार माना। उनके अनुसार धर्म राजा की शक्तियों पर नियंत्रण रखता था और शासन को निश्चित मर्यादाओं के भीतर संचालित करता था। इस प्रकार उन्होंने प्राचीन भारत में विधि के शासन तथा संवैधानिक शासन की अवधारणा के अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास किया। जायसवाल के अनुसार प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था में महत्वपूर्ण निर्णय मंत्रिपरिषद, सभा तथा अन्य संस्थाओं के साथ विचार-विमर्श के बाद लिए जाते थे। उन्होंने माना कि इस सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया से शासन में उत्तरदायित्व, संतुलन और जनसहभागिता को बढ़ावा मिलता था। इसी आधार पर उन्होंने प्राचीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को विकसित एवं संस्थागत शासन प्रणाली के रूप में व्याख्यायित किया।[6]

आधुनिक इतिहासकारों, विशेषकर रामशरण शर्मा और रोमिला थापर, ने इन व्याख्याओं की आलोचना करते हुए कहा कि अधिकांश गणराज्य पूर्ण लोकतांत्रिक न होकर कुलीनतंत्रीय थे। फिर भी यह निर्विवाद है कि के.पी. जायसवाल ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की और औपनिवेशिक धारणाओं को प्रभावी चुनौती दी।

8. प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की के.पी. जायसवाल द्वारा व्याख्या

के.पी. जायसवाल ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की व्याख्या करते हुए यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत में राजनीतिक संगठन, प्रतिनिधिक शासन तथा संवैधानिक परंपराओं का विकास अत्यंत प्राचीन काल से ही हो चुका था। उन्होंने वैदिक साहित्य, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, पाणिनि की अष्टाध्यायी, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, शिलालेखों, मुद्राओं तथा यूनानी लेखकों के विवरणों के आधार पर यह तर्क दिया कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था केवल राजतंत्र तक सीमित नहीं थी, बल्कि उसमें गणतांत्रिक एवं संस्थागत शासन के अनेक विकसित रूप विद्यमान थे। उनकी दृष्टि में सभा, समिति, गण, संघ, मंत्रिपरिषद तथा धर्म जैसी अवधारणाएँ भारतीय राजनीतिक प्रणाली के महत्वपूर्ण आधारस्तंभ थीं, जिन्होंने शासन को उत्तरदायी एवं मर्यादित बनाए रखा। सभा और समिति को वैदिक काल की महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्थाएँ माना। उनके अनुसार समिति व्यापक जनसभा थी, जबकि सभा विशिष्ट व्यक्तियों की परिषद के रूप में राजा को परामर्श देती थी। उन्होंने इन संस्थाओं को वैदिक समाज में राजनीतिक सहभागिता और सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया का प्रमाण बताया। हालांकि रामशरण शर्मा का मत है कि इन संस्थाओं का स्वरूप समय के साथ बदलता रहा और इन्हें आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाओं के समान नहीं माना जा सकता । जायसवाल ने लिच्छवि, मल्ल, शाक्य, यौधेय और मालव जैसे राज्यों को गणराज्य माना तथा कहा कि इनका शासन सामूहिक परिषदों द्वारा संचालित होता था। उनके अनुसार यह व्यवस्था प्राचीन भारत में लोकतांत्रिक परंपरा

[6] रायचौधुरी, हेमचन्द्र। (1996). प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास (अंग्रेज़ी मूल: Political History of Ancient India). नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

और जनसहभागिता का प्रमाण थी। हालांकि आधुनिक इतिहासकारों का मत है कि ये गणराज्य पूर्ण लोकतांत्रिक न होकर मुख्यतः कुलीनतंत्रीय थे।

प्राचीन भारतीय राजा मंत्रिपरिषद के सहयोग से शासन करता था। अर्थशास्त्र और अन्य ग्रंथों के आधार पर उन्होंने बताया कि यह परिषद प्रशासन, नीति-निर्माण और वित्तीय मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी तथा राजा के निर्णयों पर नियंत्रण भी रखती थी। यद्यपि इसके अधिकार विभिन्न कालों में अलग-अलग थे, फिर भी यह शासन व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग थी। जायसवाल ने 'धर्म' को केवल धार्मिक अवधारणा न मानकर शासन का सर्वोच्च नैतिक एवं विधिक आधार माना। उनके अनुसार राजा और प्रशासन धर्म के अधीन कार्य करते थे, जिससे प्राचीन भारत में विधि के शासन और संवैधानिक व्यवस्था के तत्व विद्यमान थे। यद्यपि कुछ इतिहासकार धर्म को आधुनिक संविधान के समान मानने से असहमत हैं, फिर भी भारतीय राजनीतिक परंपराओं की नई व्याख्या प्रस्तुत करने में जायसवाल का योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है।[7]

9. 'हिन्दू पॉलिटी' का महत्व

के.पी. जायसवाल की प्रसिद्ध कृति 'हिन्दू पॉलिटी' (1924) भारतीय इतिहासलेखन की महत्वपूर्ण रचनाओं में से एक है। इस ग्रंथ ने औपनिवेशिक इतिहासकारों की उस धारणा को चुनौती दी कि प्राचीन भारत केवल निरंकुश राजतंत्र पर आधारित था। जायसवाल ने अभिलेखों, वैदिक साहित्य, बौद्ध ग्रंथों और पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में संवैधानिक एवं प्रतिनिधिक राजनीतिक संस्थाएँ विद्यमान थीं ।[8]

इस पुस्तक का प्रमुख योगदान यह है कि इसमें सभा, समिति, गण, संघ और मंत्रिपरिषद जैसी संस्थाओं को शासन व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जायसवाल ने विशेष रूप से लिच्छवि, शाक्य और मल्ल जैसे गणराज्यों का उल्लेख करते हुए भारतीय राजनीतिक परंपरा में गणतांत्रिक तत्वों की उपस्थिति को रेखांकित किया। यद्यपि आधुनिक इतिहासकार इन्हें पूर्ण लोकतांत्रिक न मानकर कुलीनतंत्रीय मानते हैं, फिर भी इस अध्ययन ने गणराज्यों के महत्व को इतिहासलेखन के केंद्र में स्थापित किया। हिन्दू पॉलिटी का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें धर्म को शासन की संवैधानिक मर्यादा तथा राजा की शक्तियों पर नियंत्रण के साधन के रूप में व्याख्यायित किया गया है। इस दृष्टिकोण ने भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को वैचारिक आधार प्रदान किया और यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत में विधि के शासन एवं संवैधानिक परंपराओं का विकास प्राचीन काल से ही विद्यमान था। यद्यपि इसकी कुछ व्याख्याओं की आलोचना हुई है, फिर भी प्राचीन भारतीय राजनीतिक इतिहास के अध्ययन में यह ग्रंथ आज भी अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है।[9]

10. राष्ट्रवादी इतिहासलेखन पर के.पी. जायसवाल का प्रभाव

के.पी. जायसवाल ने भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को नई दिशा प्रदान की। जब औपनिवेशिक इतिहासकार भारत को निरंकुश राजतंत्र वाला देश बताते थे, तब जायसवाल ने ऐतिहासिक स्रोतों के आधार पर यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में गणराज्य, सभा, समिति तथा संवैधानिक संस्थाओं की समृद्ध परंपरा विद्यमान थी। इस प्रकार उनके विचारों ने भारतीय अतीत के प्रति आत्मगौरव और राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ किया। उनकी प्रसिद्ध कृति हिन्दू पॉलिटी ने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत में स्वशासन, विधि का शासन और प्रतिनिधिक संस्थाओं का विकास प्राचीन काल से ही हुआ था। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान इस विचार ने भारतीय नेताओं और बुद्धिजीवियों को यह ऐतिहासिक आधार प्रदान किया कि लोकतंत्र भारत की अपनी परंपरा का हिस्सा है, न कि केवल पश्चिमी अवधारणा।[10]

---

[7] थापर, रोमिला। (2002). प्रारम्भिक भारत : उद्भव से 1300 ईस्वी तक (अंग्रेज़ी मूल: Early India: From the Origins to AD 1300). नई दिल्ली: पेंगुइन बुक्स इंडिया।
[8] के.पी. जायसवाल पर व्याख्यान एवं ऐतिहासिक मूल्यांकन। भारतीय सांस्कृतिक संबंधी अभिलेख।
[9] पाणिनि। (2001). अष्टाध्यायी (हिन्दी संस्करण). वाराणसी: चौखम्भा संस्कृत सीरीज़ कार्यालय।
[10] मुखर्जी, हरिदास। (1974). काशी प्रसाद जायसवाल और भारतीय इतिहासलेखन में उनका योगदान. पटना: के.पी. जायसवाल अनुसंधान संस्थान।

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

लिच्छवि, मल्ल, शाक्य और यौधेय जैसे गणराज्यों की उनकी व्याख्या ने भारतीय राजनीतिक विरासत के पुनर्मूल्यांकन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके कार्यों से प्रेरित होकर ए.एस. अल्तेकर, एच.सी. रायचौधुरी सहित अनेक इतिहासकारों ने प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था और राजनीतिक संस्थाओं पर आगे शोध किया। यद्यपि रामशरण शर्मा और रोमिला थापर जैसे इतिहासकारों ने उनके कुछ निष्कर्षों को राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से प्रभावित एवं आदर्शवादी माना, फिर भी यह निर्विवाद है कि के.पी. जायसवाल ने औपनिवेशिक धारणाओं को चुनौती देकर भारतीय राजनीतिक इतिहास और राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को नई दिशा प्रदान की तथा प्राचीन भारतीय लोकतांत्रिक परंपराओं के अध्ययन को व्यापक आधार दिया।

11. आलोचनात्मक मूल्यांकन

के.पी. जायसवाल ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की और औपनिवेशिक इतिहासलेखन की अनेक धारणाओं को चुनौती दी। उन्होंने हिन्दू पॉलिटी के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में गणराज्य, प्रतिनिधिक शासन और संवैधानिक परंपराएँ विद्यमान थीं। हालांकि आधुनिक इतिहासकारों ने उनके कुछ निष्कर्षों की आलोचनात्मक समीक्षा भी की है। लिच्छवि, शाक्य, मल्ल तथा अन्य प्राचीन गणराज्यों को लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का उदाहरण माना और यह प्रतिपादित किया कि इन राज्यों में सत्ता का संचालन सामूहिक परिषदों एवं प्रतिनिधिक संस्थाओं के माध्यम से होता था। उनके अनुसार यह व्यवस्था भारतीय राजनीतिक परंपरा में जनसहभागिता एवं प्रतिनिधिक शासन की प्राचीनता को दर्शाती है। किंतु रामशरण शर्मा एवं रोमिला थापर जैसे इतिहासकारों का मत है कि इन गणराज्यों में राजनीतिक अधिकार मुख्यतः अभिजात वर्ग तक सीमित थे, इसलिए इन्हें आधुनिक लोकतंत्र के बजाय कुलीनतंत्रीय व्यवस्था के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

आलोचकों का यह भी मत है कि के.पी. जायसवाल ने कुछ शिलालेखों, सिक्कों तथा साहित्यिक स्रोतों के आधार पर व्यापक राजनीतिक निष्कर्ष प्रस्तुत किए। कई विद्वानों के अनुसार उपलब्ध स्रोतों का क्षेत्रीय एवं कालगत संदर्भ सीमित था, इसलिए उनसे संपूर्ण भारतीय राजनीतिक व्यवस्था के बारे में सामान्य निष्कर्ष निकालना सावधानी की अपेक्षा रखता है। इस कारण उनकी कुछ व्याख्याओं को अपेक्षाकृत अधिक आदर्शवादी माना गया है। राष्ट्रवादी इतिहासकार होने के कारण जायसवाल के लेखन पर राष्ट्रीय चेतना का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा भारतीय सभ्यता के संबंध में स्थापित नकारात्मक धारणाओं का प्रतिवाद करते हुए भारतीय राजनीतिक संस्थाओं की प्राचीनता और उन्नत स्वरूप पर विशेष बल दिया। आधुनिक विद्वानों का मत है कि इस राष्ट्रवादी दृष्टिकोण के कारण उन्होंने कुछ स्थानों पर उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों की ऐसी व्याख्या की, जो भारतीय शासन व्यवस्था को वास्तविकता की अपेक्षा अधिक लोकतांत्रिक एवं संवैधानिक रूप में प्रस्तुत करती है।[11]

समकालीन अनुसंधानों के आधार पर यह माना जाता है कि अधिकांश प्राचीन भारतीय गणराज्यों में शासन अभिजात या कुलीन वर्ग के हाथों में केंद्रित था तथा सामान्य जनता की प्रत्यक्ष भागीदारी सीमित थी। इसलिए इन्हें पूर्ण लोकतांत्रिक राज्य न मानकर कुलीनतंत्रीय गणराज्य कहना अधिक उपयुक्त माना जाता है। फिर भी इन राज्यों में परिषदों, सामूहिक विचार-विमर्श तथा संस्थागत निर्णय-प्रक्रिया की उपस्थिति भारतीय राजनीतिक विकास की महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। इन आलोचनाओं के बावजूद के.पी. जायसवाल का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और स्थायी है। उन्होंने भारतीय इतिहासलेखन को नई दिशा प्रदान करते हुए अभिलेखीय साक्ष्यों, मुद्राशास्त्र तथा साहित्यिक स्रोतों के समन्वित उपयोग को बढ़ावा दिया। साथ ही प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं, गणराज्यों, संवैधानिक परंपराओं और प्रशासनिक संरचनाओं के अध्ययन को स्वतंत्र शोध-विषय के रूप में स्थापित किया। आज भी भारतीय राजनीतिक इतिहास और राष्ट्रवादी इतिहासलेखन के अध्ययन में उनका कार्य एक आधारभूत एवं प्रेरणादायक संदर्भ माना जाता है।

[11] Kothari, C. R. (2004). Research Methodology: Methods and Techniques (2nd ed.). New Delhi: New Age International Publishers.

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 4, Issue 1, July 2026
Available Online : http://shodhprakashan.in/

12. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि के.पी. जायसवाल आधुनिक भारतीय इतिहासलेखन के प्रमुख विद्वानों में थे, जिन्होंने प्राचीन भारतीय राजनीतिक संस्थाओं का स्रोत-आधारित पुनर्मूल्यांकन करते हुए औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा स्थापित अनेक धारणाओं को प्रभावी ढंग से चुनौती दी। उन्होंने अपनी प्रसिद्ध कृति हिन्दू पॉलिटी के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि प्राचीन भारत में सभा, समिति, गण, संघ तथा मंत्रिपरिषद जैसी संस्थाएँ विकसित एवं संगठित रूप में विद्यमान थीं तथा शासन व्यवस्था केवल निरंकुश राजतंत्र तक सीमित नहीं थी। उनके अनुसार भारतीय राजनीतिक परंपरा में सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया, प्रतिनिधिक शासन, विधि का शासन तथा संवैधानिक मर्यादाओं के तत्व प्राचीन काल से ही विद्यमान थे। अभिलेखों, शिलालेखों, मुद्राओं तथा वैदिक और बौद्ध साहित्य के आधार पर भारतीय राजनीतिक इतिहास की ऐसी व्याख्या प्रस्तुत की, जिसने राष्ट्रवादी इतिहासलेखन को नया वैचारिक आधार प्रदान किया। उनके शोधों ने भारतीय अतीत के प्रति आत्मगौरव की भावना को सुदृढ़ किया तथा यह स्थापित करने का प्रयास किया कि लोकतांत्रिक और प्रतिनिधिक संस्थाओं की परंपरा भारत में अत्यंत प्राचीन रही है। साथ ही उन्होंने राजनीतिक इतिहास के अध्ययन को केवल राजाओं और युद्धों तक सीमित न रखकर राजनीतिक संस्थाओं और प्रशासनिक संरचनाओं के विश्लेषण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। यद्यपि रामशरण शर्मा, रोमिला थापर तथा अन्य आधुनिक इतिहासकारों ने उनके कुछ निष्कर्षों को आदर्शवादी एवं राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से प्रभावित माना है और यह तर्क दिया है कि अनेक प्राचीन गणराज्य पूर्ण लोकतांत्रिक न होकर कुलीनतंत्रीय स्वरूप के थे, फिर भी यह निर्विवाद है कि के.पी. जायसवाल ने प्राचीन भारतीय राजनीतिक इतिहास के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की। भारतीय राष्ट्रवादी इतिहासलेखन, संवैधानिक परंपराओं तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं के ऐतिहासिक विकास के अध्ययन में उनका योगदान आज भी अत्यंत महत्वपूर्ण, प्रेरणादायक एवं प्रासंगिक माना जाता है।